IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

अनुसूचित जाति के बच्चों की शैक्षिक स्थिति: एक ऐतिहासिक दृष्टिकोण

अमित यादव[1] डॉ साधना रानी[2]

[1]शोध छात्र, भूगोल विभाग, वी एस एस डी कॉलेज, कानपुर

[2]प्रोफेसर, भूगोल विभाग, वी एस एस डी कॉलेज, कानपुर

अमूर्त :

शिक्षा ने भारत में अनुसूचित जाति के सामाजिक और आर्थिक जीवन में बदलाव उत्पन्न किया है। संवैधानिक प्रावधानों, शिक्षा में नीतिगत बदलाव और साथ ही अपने बच्चों के लिए माता-पिता की आकांक्षाओं के कारण स्कूलों में अनुसूचित जाति के बच्चों का अनुपात बढ़ गया है। लेकिन, विशेष रूप से शिक्षा के संदर्भ में अनुसूचित जाति के ऐतिहासिक अनुभव अभाव और उत्पीड़न पर आधारित हैं। अनुसूचित जाति को पारंपरिक रूप से हिंदू जातीय व्यवस्था में सबसे निचली स्थिति के कारण सीखने से वंचित रखा गया था, जो उनकी शिक्षा के निम्न स्तर में परिलक्षित होता है जाति व्यवस्था और गरीबी अनुसूचित जाति की शिक्षा की गुणवत्ता तक पहुंच में बाधा बनी हुई है। यह वास्तव में एक खेद जनक स्थिति है कि हमारी आजादी और मानव अधिकारों की सार्वभौम घोषणा के 75 वर्ष के बाद भी अनुसूचित जाति के अधिकांश बच्चे शिक्षा तक पहुंचने में असमर्थ है और उनकी शैक्षिक स्थिति असंतोषजनक बनी हुई है। यह पेपर अनुसूचित जाति के बच्चों की स्कूली शैक्षिक गतिविधियों में पहुंच, उपलब्धता, समानता और भागीदारी के संदर्भ में मुद्दों और चिंताओं पर चर्चा करता है यह मुख्य रूप से अनुसूचित जाति के बच्चों द्वारा साक्षरता, नामांकन, ड्रॉप आउट, सामाजिक बहिष्कार और सीखने की प्रक्रिया में अलगाव पर ध्यान केंद्रित करते हुए शैक्षिक स्थिति की भी जांच करता है।

कीवर्ड: अनुसूचित जाति, शिक्षा, शैक्षिक पहुंच, सामाजिक बहिष्कार, जाति व्यवस्था।

परिचय:

अनुसूचित जाति के बच्चों को गरीबी, जातिगत भेदभाव और विभिन्न प्रकार की वास्तविक और प्रतीकात्मक हिंसा, बेघर होने की समस्या का सामना करना पड़ रहा है। अधिकांश अनुसूचित जाति को शिक्षा प्राप्त करते समय बहिष्कार और भेदभाव का सामना करना पड़ता है जिससे वे शिक्षा का लाभ उठाने में असमर्थ होते हैं। राज्य की ओर से अनुसूचित जाति और उनकी शिक्षा के संबंध में दृष्टिकोण में सकारात्मक बदलाव आया है। आर्थिक उदारीकरण के बाद देश के महानगरों, शहरों, कस्बों एवं गांव में निजी क्षेत्र के द्वारा कई शैक्षणिक संस्थाओं की स्थापना की गई है। इन शैक्षणिक संस्थानों में शिक्षा के प्रति सामाजिक दृष्टिकोण के अपेक्षा व्यवसायिक दृष्टि कोण का अधिक प्रभाव देखने को मिलता है। ज्यादातर सरकारी संस्थान इन निजी संस्थाओं के अपेक्षा कम गुणवत्ता पूर्ण होते हैं जिस कारण सामाजिक तथा आर्थिक रूप से पिछड़ी अनुसूचित जातियों के बच्चे शैक्षणिक रूप से पीछे रह जाते हैं। शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009 में 14 वर्ष की आयु तक के सभी बच्चों को नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा का वादा किया गया था, शिक्षा का अधिकार अधिनियम सार्वभौमिक है अतः किसी भी भेदभाव अथवा बहिष्कार की अनुमति नहीं देता है फिर भी देखा गया है कि इस अधिनियम के तहत जिन आर्थिक कमजोर वर्ग के छात्रों को शिक्षण संस्थानों में प्रवेश दिया जाता है उन्हें भेदभाव का सामना करना पड़ता है। शिक्षा और नैतिकता बच्चों के सर्वांगीण विकास के लिए महत्वपूर्ण तत्व हैं, नैतिकता का तात्पर्य है बच्चों को वह गुण या नैतिक आदतें

प्राप्त करने में मदद करना जो उन्हें व्यक्तिगत रूप से अच्छा जीवन जीने के साथ ही समाज के लिए कुछ उत्पादक कार्य करने में मदद करें। हालांकि, भारत सभी के लिए समान अवसर की गारंटी देने में चुनौतियों का सामना कर रहा है।

शिक्षा के लिए संवैधानिक एवं प्रशासनिक प्रावधान :

"शिक्षा हर व्यक्ति का जन्मसिद्ध अधिकार है और इस हक से उसे कभी भी वंचित नहीं किया जा सकता शिक्षा इंसान को निडर बनाती है, एकता सिखाती है, उसे अधिकार का मतलब समझती है और अधिकार एवं स्वतंत्रता के लिए संघर्ष करना सिखाती है" - डॉ भीमराव अंबेडकर।

डॉ आंबेडकर के अनुसार शिक्षा सामाजिक गुलामी को काटने का सही हथियार है और यह दलित जनता को आर्थिक सामाजिक एवं राजनीतिक स्वतंत्रता हासिल करने के लिए प्रेरित करती है। महात्मा ज्योतिबा राव फुले ने भी दलितों की मुक्ति के लिए शिक्षा के महत्व का वर्णन करते हुए कहा है "शिक्षा के अभाव में उनकी बुद्धि खराब हो गई, बुद्धि के अभाव में उनकी नैतिकता नष्ट हो गई, नैतिकता के अभाव में उनकी प्रगति रुक गई, उनकी संपत्ति गायब हो गई, उनके सभी दु:ख अशिक्षा से उत्पन्न हुए हैं"(कीर, धनंजय; 1954)। डॉ आंबेडकर के सामाजिक दार्शनिक विचार शिक्षा समतावाद की आधारशिला पर आधारित थे। मानवीय गरिमा और आत्मसम्मान उनके सामाजिक दर्शन के केंद्र में थे वे शिक्षा का उपयोग समाज में न्याय, समानता, बंधुत्व, स्वतंत्रता तथा निर्भयता की स्थापना के लिए करना चाहते थे। वे जन्म आधारित समाज के स्थान पर मूल्य आधारित समाज स्थापित करना चाहते थे।

भारत का संविधान शिक्षा के नैतिक मूल्य और समता मूलक समाज की स्थापना के लिए कार्य करता है। संविधान की प्रस्तावना में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि सभी को स्थिति और अवसर की समानता का अधिकार है। संविधान में कई प्रावधान और संशोधन किए गए हैं जो सामाजिक समानता और मानव अधिकारों को सुनिश्चित करने में सहायक है। अनुसूचित जातियों जनजातियों तथा अन्य पिछड़ा वर्ग के उत्थान के लिए संविधान निर्माताओं की चिंता उनके उत्थान के लिए स्थापित विस्तृत संवैधानिक तंत्र में परिलक्षित होती है। भारत के संविधान का अनुच्छेद 17 अस्पृश्यता का अंत करता है। संविधान के अनुच्छेद 46 के अनुसार राज्य दुर्बल वर्गों विशेषकर अनुसूचित जातियों और जनजातियों के लोगों के शिक्षा और अर्थ संबंधी हितों की विशेष सावधानी से अभिव्यक्ति करेगा और सामाजिक अन्याय तथा सभी प्रकार के शोषण से उनकी सुरक्षा करेगा। संविधान का अनुच्छेद 335 प्रावधान करता है कि संघ और राज्यों के मामलों में सेवाओं और पदों पर नियुक्तियां हेतु अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों के दावे को लगातार प्रशासनिक दक्षता के साथ ध्यान में रखा जाएगा। स्वतंत्रता के बाद विभिन्न आयोग और समितियां की स्थापना की गई जिन्होंने व्यापक विमर्श किया और विशेष रूप से अनुसूचित जाति के शैक्षिक विकास के लिए सिफारिशें की हैं। राधाकृष्णन शिक्षा आयोग (1948) ने संपूर्ण स्कूल शिक्षा प्रणाली में सुधार की कोशिश की, कोठारी आयोग(1964) ने भी शैक्षिक अवसर की समानता का एक व्यापक दृष्टिकोण दिया है। कोठारी आयोग ने स्कूली शिक्षा की गहन समीक्षा प्रस्तुत की जो भारत के शिक्षा के इतिहास में आज भी सर्वाधिक गहन अध्ययन माना जाता है यह भारत का ऐसा पहला शिक्षा आयोग था जिसने अपनी रिपोर्ट में सामाजिक बदलावों को ध्यान में रखते हुए ठोस सुझाव दिए थे। 24 जुलाई 1986 को भारत की प्रथम राष्ट्रीय शिक्षा नीति घोषित की गई यह पूर्ण रूप से कोठारी आयोग के प्रतिवेदन पर आधारित थी। इसमें सामाजिक दक्षता, राष्ट्रीय एकता एवं समाजवादी समाज की स्थापना करने का लक्ष्य निर्धारित किया गया। इसमें शिक्षा के अवसरों की समानता का प्रयास तथा विज्ञान व तकनीकी शिक्षा पर बल के साथ नैतिक व सामाजिक मूल्यों के विकास पर जोर दिया गया। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 में आवश्यक सुधारो के लिए 1992 में एक प्रोग्राम ऑफ एक्शन का गठन किया गया। इस समिति की अध्यक्षता आंध्र प्रदेश के तत्कालीन मुख्यमंत्री श्री एन जनार्दन रेड्डी ने की उनके साथ इस समिति में छ: शिक्षा मंत्री तथा आठ शिक्षाविद भी शामिल थे इसका मुख्य उद्देश्य सार्वभौमिक नामांकन एवं प्रतिधारण जैसे दीर्घकालिक लक्ष्यों को प्राप्त करना था। पीओए 1992 की सिफारिश के आधार पर देशभर में नवोदय विद्यालयों की स्थापना की गई इन स्कूलों की योजना उच्च उपलब्धि हासिल करने वाले छात्रों को उनकी सामाजिक आर्थिक पृष्ठभूमि की परवाह किए बिना उनकी मदद करना था। यह प्रस्ताव आमजन के लिए स्कूली शिक्षा के गुणवत्ता में सुधार के लिए काफी लाभदायक था क्योंकि देश के लगभग 41% छात्र गरीबी रेखा से नीचे के थे। राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005 ने विभिन्न नीतियों के माध्यम से लिंग, जाति, भाषा, संस्कृति और धर्म की असमानता से उत्पन्न शिक्षा की हानि को संबोधित करने पर जोर दिया, इसके बाद राष्ट्रीय और राज्य दोनों स्तरों पर

विभिन्न कार्यक्रम और परियोजनाएं शुरू की गई, जैसे - जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम, सर्व शिक्षा अभियान, शिक्षा कर्मी योजना, बिहार शिक्षा परियोजना, लोक जुंबिश, अनौपचारिक शिक्षा कार्यक्रम, शिक्षा गारंटी योजना, कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालय आदि। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 वर्तमान शिक्षा प्रणाली के सामने आने वाली चुनौतियों जैसे शिक्षा की पहुंच, समानता, गुणवत्ता, सामर्थ्य और जवाबदेही का समाधान करती है । नई शिक्षा नीति के तहत वर्ष 2030 तक सकल नामांकन अनुपात को 100% लाने का लक्ष्य रखा गया है नई शिक्षा नीति के अंतर्गत शिक्षा क्षेत्र पर सकल घरेलू उत्पाद के 6% हिस्से के वह का लक्ष्य रखा गया है इस नीति में पांचवी कक्षा तक की शिक्षा में मातृभाषा को शिक्षा के माध्यम के रूप में अपनाने पर जोर दिया गया है, साथ ही मातृभाषा को कक्षा 8 और आगे की शिक्षा के लिए प्राथमिकता देने का सुझाव दिया गया है। नई शिक्षा नीति में पहले वर्ष में कोर्स को छोड़ने पर प्रमाण पत्र दूसरे वर्ष में छोड़ने पर डिप्लोमा एवं अंतिम वर्ष पूरा कर लेने पर डिग्री देने का प्रावधान है।

अनुसूचित जाति के बच्चों की शैक्षिक स्थिति :

शिक्षा के संदर्भ में अनुसूचित जाति के बच्चों के ऐतिहासिक अनुभव अभाव और उत्पीड़न पर आधारित है। जाति तथा गरीबी अनुसूचित जाति के बच्चों की स्कूली शिक्षा के साथ-साथ उन्हें मिलने वाली शिक्षा की गुणवत्ता तक पहुंच में बाधा बने हुए हैं। भारतीय जाति व्यवस्था में निम्नतम स्थिति के कारण अनुसूचित जाति के बच्चों को परंपरागत रूप से सीखने से वंचित रखा गया है, जो उनकी कम साक्षरता दर और शिक्षा के स्तर में परिलक्षित होता है। 19वीं सदी के मध्य में इन समुदायों के लिए कानूनी रूप से स्कूल खोले गए थे, हालांकि शिक्षा प्राप्त करने के उनके प्रयासों को सामान्य जाति के लोगों द्वारा काफी विरोध का सामना करना पड़ा। समानता और सामाजिक न्याय के लिए उनके संघर्ष में शिक्षा तक पहुंच एक केंद्र बिंदु रहा है। जाति व्यवस्था को खत्म करने और भेदभाव दूर करने के लिए कई आंदोलन किए गए, जाति उत्पीड़न पर काबू पाने के लिए हमेशा शिक्षा को प्राथमिक साधन के रूप में प्रस्तावित किया गया है। सरकार और निजी संस्थाओं द्वारा कई सार्वजनिक एवं निजी स्कूल खोले गए हैं, सरकारी स्कूलों में अनुसूचित जाति के छात्रों का नामांकन बढ़ाया गया है फिर भी गैर अनुसूचित जाति के छात्रों की तुलना में साक्षरता स्तर में बहुत सुधार नहीं हुआ है। 2011 की जनगणना के अनुसार अनुसूचित जाति के लोगों की साक्षरता दर 66% थी और गैर अनुसूचित जाति की 76%, अनुसूचित जाति के पुरुषों की साक्षरता 75 प्रतिशत और अनुसूचित जाति की महिलाओं की साक्षरता दर 56% है। अनुसूचित जाति के प्राथमिक स्तर तक शिक्षा पाने वाले कुल छात्रों में से केवल एक तिहाई ही माध्यमिक स्तर की शिक्षा प्राप्त करते हैं तथा माध्यमिक की शिक्षा पाने वाले छात्र-छात्राओं में से केवल 15% ही उच्च शिक्षा को प्राप्त करते हैं। गैर अनुसूचित जाति की साक्षरता दर की तुलना में अनुसूचित जाति की साक्षरता दर में दसकीय वृद्धि बहुत धीमी है जिसके कारण दोनों के बीच में साक्षरता का अंतर बढ़ता जा रहा है और उनके बीच असमानताएं स्पष्ट नजर आती है। इसके अलावा अधिकांश अनुसूचित जाति के परिवार में जिनमें कोई भी साक्षर व्यक्ति नहीं है यूनिसेफ बेसलाइन सर्वेक्षण के अनुसार देश के 43 जिलों में अनुसूचित जाति और गैर अनुसूचित जाति के बच्चों के बीच उपस्थिति दर और सीखने की उपलब्धि में महत्वपूर्ण असमानताएं हैं स्कूल जाने वाले बच्चों में अनुसूचित जाति के 72.5 प्रतिशत बच्चे हैं जबकि गैर अनुसूचित जाति के 84% बच्चे स्कूल जाने वाली उम्र में अधिकांश अनुसूचित जाति के लोग स्कूल में दाखिला नहीं लेते हैं और जो दाखिला लेते हैं कोई दो से तीन साल से अधिक पढ़ाई नहीं करते अनुसूचित जाति में नामांकित हर दूसरा बच्चा प्राथमिक शिक्षा पूरी करने से पहले पढ़ाई छोड़ देता है। प्राथमिक और माध्यमिक स्तर पर गैर अनुसूचित जाति की तुलना में अनुसूचित जाति के छात्रों की ड्राप आउट संख्या काफी अधिक है। 2004-05 में प्राथमिक तथा माध्यमिक स्तर पर अनुसूचित जाति की लड़कियों की ड्राप आउट दर क्रमशः 55% तथा 60% थी। इसी प्रकार जैसे-जैसे हम शिक्षा की सीढ़ी ऊपर चढ़ते हैं प्रत्येक स्तर पर अनुसूचित जाति में शिक्षकों का प्रतिशत गैर अनुसूचित जाति की तुलना में काम होता जाता है ।

स्कूल तक आसान पहुंच का अभाव :

अनुसूचित जाति के बच्चों के नामांकन को सुनिश्चित करने के लिए अनुसूचित जाति की बस्ती (ग्रामीण क्षेत्र) के भीतर एक स्कूल की उपलब्धता सबसे महत्वपूर्ण तत्व में से एक प्रतीत होती है। छठे अखिल भारतीय शैक्षिक सर्वेक्षण (एनसीईआरटी 1998) के अनुसार अधिकांश अनुसूचित जाति के बच्चे सरकारी स्कूली शिक्षा का लाभ उठाते हैं। आठवें अखिल भारतीय शैक्षिक सर्वेक्षण (एनसीईआरटी 2015) के अनुसार प्राथमिक स्तर पर अनुसूचित जाति के बच्चों का नामांकन कुल नामांकन

का 18% है, ग्रामीण व शहरी क्षेत्र में क्रमशः 18.75 प्रतिशत व 15.45 प्रतिशत है। उच्च प्राथमिक स्तर पर कुल नामांकन में अनुसूचित जाति की हिस्सेदारी 17.43 प्रतिशत है, ग्रामीण क्षेत्र में यह हिस्सेदारी 18.51 प्रतिशत तथा शहरी क्षेत्र में 14.90 प्रतिशत है। अनुसूचित जाति के कुल नामांकन में 47.77 प्रतिशत लड़कियां हैं, ग्रामीण क्षेत्र में अनुसूचित जाति की लड़कियों का नामांकन प्रतिशत 47.56 प्रतिशत तथा शहरी क्षेत्र में 48.36 प्रतिशत है। स्कूलों की भौतिक दूरी को अक्सर अनुसूचित जाति के बच्चों के लिए एक बाधा के रूप में उद्धृत किया जाता है, विशेष रूप से मध्य और माध्यमिक विद्यालय के उच्च स्तर पर क्योंकि वह अक्सर उन बस्तियों में रहते हैं जो गांव के बाहरी किनारों पर है। बिहार राजस्थान मध्य प्रदेश उत्तर प्रदेश जैसे राज्यों में यदि स्कूल गांव के उसे भाग में स्थित है जहां सवर्ण जातियां रहती हैं तो यह उनके स्कूल पहुंचने में चुनौती पेश करता है। हालांकि, शारीरिक दूरी के अलावा 'स्कूल की सामाजिक दूरी' पर भी विचार किया जाना चाहिए जैसे की पब्लिक रिपोर्ट ओन बेसिक एजुकेशन (PROBE) में कहा गया है कि गांव अलग-अलग बस्तियां में विभाजित हैं और एक बस्ती के बच्चे जातिगत तनाव के कारण दूसरी बस्ती में स्थित स्कूल जाने में अनिश्चित या असमर्थ हैं। अनुसूचित जाति की लड़कियों की शैक्षिक स्थिति एक गंभीर मुद्दा है क्योंकि वह अक्सर अपनी सामाजिक स्थिति एवं लिंग के कारण दोगुनी वंचित होती हैं। लैंगिक समानता चिंता का एक प्रमुख विषय है क्योंकि बालिकाओं का ड्रॉप आउट दर बालकों से अधिक है। अनुसूचित जाति की बालिकाओं में अशिक्षा और स्कूल छोड़ने की उच्च दर पाए जाने के पीछे प्रमुख कारण हैं, लड़कियों को स्कूल भेजने में परिवार का विरोध, गांव में सुरक्षा स्कूल, के लिए परिवहन का अभाव, जिन बालिकाओं के माता-पिता काम के सिलसिले में प्रतिदिन घर से बाहर जाते हैं उन्हें घर एवं अपने छोटे भाई बहनों की देखभाल के लिए मजबूर किया जाता है, बहुत सी लड़कियों की कम उम्र में ही शादी कर दी जाती है जिस कारण उन्हें पढ़ाई छोड़नी पड़ती है।

स्कूलों में अलगाव :

अनुसूचित जाति के बच्चों के प्रति शिक्षकों द्वारा भेदभाव आम तौर पर कई विद्यालयों में पाया
जाता है। शिक्षकों को समाज में जातिगत संबंधों के आधार पर भेदभावपूर्ण दृष्टिकोण और प्रथाओं को बनाए रखते हुए पाया गया है। शिक्षक अपनी कक्षाओं में भेदभावपूर्ण रवैया अपनाते हैं, बच्चों को कमरे में पीछे बैठने के लिए मजबूर करते हैं, दोपहर के भोजन के समय अनुसूचित जाति के बच्चों को सामान्य बच्चों से अलग बैठाया जाता है, गैर अनुसूचित जाति के बच्चों को अनुसूचित जाति के बच्चों के बगल में बैठने या उनकी प्लेट को चुने से रोकते हैं। शिक्षकों द्वारा अनुसूचित जाति के बच्चों की कक्षा में भागीदारी सीमित की जाती है, उन्हें मौखिक दुर्व्यवहार का शिकार बनाया जाता है, उन्हें कम अंक दिए जाते हैं, छोटी-छोटी बातों पर कठोर शारीरिक दण्ड दिया जाता है जिससे कि उनमें स्कूली शिक्षा एवं शिक्षकों के प्रति डर की भावना विकसित होती है। स्कूलों में कई बार देखा गया है की अनुसूचित जाति के बच्चों को अलग बैठाने के साथ ही शिक्षक उनकी कॉपी और स्लेट भी नहीं छूते हैं, साथ ही इन बच्चों से झाड़ू लगवाने, सफाई करवाने, बीड़ी-पान मंगवानी जैसे छोटे कार्य करवाए जाते हैं।

निष्कर्ष :

शैक्षिक असमानता, अनुसूचित जाति के बच्चों का बहिष्कार, जातिगत सामंती समाज के तहत उनका उत्पीड़न, स्थानिक अलगाव, सांस्कृतिक भेदभाव और बाद में समाज द्वारा हासिए पर रखा जाना देश भर के अनुसूचित जाति के लोगों की कठोर सामाजिक वास्तविकता है। असमान स्कूली शिक्षा ने वंचित तबके के बच्चों के शैक्षिक अवसरों को सीमित कर दिया है। जाति व्यवस्था के दमनकारी और अन्यायपूर्ण पदानुक्रम ने अनुसूचित जाति के बच्चों को शिक्षा में पूर्ण भागीदारी से वंचित किया है। शोध पत्र स्कूल में बहिष्कार और भेदभावपूर्ण प्रथाओं की पहचान करता है जो अनुसूचित जाति के बच्चों के शिक्षा के अनुभवों को प्रभावित करते हैं। अनुसूचित जाति के बच्चों में निम्न शिक्षा स्तर, बेहतर आर्थिक गतिविधियों में भाग लेने की उनकी क्षमता को प्रभावित करता है और उन्हें नियमित वेतन भोगी नौकरियों का लाभ उठाने के लिए अयोग्य बनाता है। यह समूह समाज की वंचित स्थिति का नेतृत्व करता है, इस वंचित तबके की शिक्षा की समस्या का अभी तक कोई स्थाई समाधान उपलब्ध नहीं कराया जा सका है। स्वतंत्र भारत में राज्य और समाज अपेक्षाओं के अनुरूप नहीं रहे क्योंकि भेदभाव और बहिष्कार अभी भी हमारे समाज में मौजूद है। परिवर्तन के लिए महत्वपूर्ण उपकरण के रूप में देखे जाने वाले शिक्षण संस्थाएं असल में जातिगत पहचान, अपमान एवं भेदभाव को बढ़ावा देने का माध्यम और उपकरण बन गए हैं। उच्च जाति समूहों द्वारा शिक्षा और सामाजिक नेटवर्किंग में दलितों के प्रति हर दिन भेदभावपूर्ण प्रथाओं को आत्मसात

कर लिया गया है, इससे भी आश्चर्यजनक बात यह है कि शिक्षा ना तो जागरूकता बढ़ाने में महत्वपूर्ण रही है ना ही ऐसी मूल्य प्रणाली सुनिश्चित कर पाई है जो दलित बच्चों के साथ हो रहे भेदभाव का विरोध कर सके। अनुसूचित जाति के लिए एक समावेशी शिक्षा नीति बनाना महत्वपूर्ण आवश्यकता है इसके साथ ही पर्याप्त संख्या में आवासीय विद्यालयों की स्थापना करना और शिक्षकों में दलित बच्चों के प्रति संवेदनशीलता पैदा करना भी आवश्यक है। अनुसूचित जाति की बस्तियों में स्थित स्कूलों में बुनियादी ढांचे में सुधार करना छात्रवृत्ति प्रदान करना और उनमें शिक्षा की गुणवत्ता पैदा करने के साथ अनुसूचित जाति के बच्चों तक मुफ्त शिक्षा की समान पहुंच सुनिश्चित करना होगा, साथ ही वंचित वर्ग के लिए योजनाओं और प्रावधानों का प्रभावी कार्यान्वयन और शिक्षा के अधिकार को उसकी वास्तविक भावना में लागू करने के लिए नीति निर्माताओं और कार्यान्वयनकर्ताओं की मानसिकता में बदलाव की आवश्यकता है, तभी अनुसूचित जाति के लोगों का शैक्षिक, सामाजिक एवं आर्थिक विकास हो पाएगा।